II

स्वामी विवेकानंद
(Swami Vivekanand)

स्वामी विवेकानंद (1863–1902) आधुनिक भारत के ऐसे संन्यासी, दार्शनिक, और प्रचारक थे जिन्होंने स्वयं तो राजनीति में कोई भाग नहीं लिया, परंतु प्रतिभा से देश में स्वतंत्रता-प्रेम की ज्योति जगा दी, राष्ट्रीय गौरव के प्रति चेतना और पश्चिम में भारतीय संस्कृति की धाक जमा दी। जिन दिनों पूर्व के देशों की महानता का गुणगान हो रहा था, उन दिनों स्वामीजी ने पश्चिम को पूर्व का प्रमाण देकर चकित और चमत्कृत कर दिया।

उनका जन्म का नाम नरेंद्रनाथ दत्त था, परंतु 1893 में जब उन्होंने शिकागो सम्मेलन (Parliament of Religions) में भाग लेने के लिए प्रस्थान किया, तब संन्यासी के रूप में 'विवेकानंद' नाम अपना लिया। वे रामकृष्ण परमहंस (1836- सबसे यशस्वी शिष्य थे। 1897 में उन्होंने समाज-सेवा के उद्देश्य से बैलूर में मिशन की स्थापना की। उनकी दार्शनिक कृतियों में 'कर्मयोग' और पतंजलि की टीका विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतीय समाज की समस्याओं के संबंध

वर्णित कृतियां हैं: 'भारत और उसकी समस्याएं' (India and Her Problems); 'आधुनिक भारत' (Modern India); 'जनता-जनार्दन के प्रति हमारे कर्त्तव्य' (Our Duties to the Masses); 'अधिकारवाद की बुराइयां' (The Evils of *Adhikarvad*); और 'जातिवाद का चक्र' (The Cycle of Caste)। इनके अलावा उन्होंने विविध अवसरों पर जो ओजस्वी भाषण दिए, वे भी उनके सामाजिक और राजनीतिक विचारों की महत्त्वपूर्ण स्रोत-सामग्री हैं।

मानववाद का आध्यात्मिक आधार
(Spiritual Foundations of Humanism)

एक संन्यासी दार्शनिक के नाते स्वामी विवेकानंद का मुख्य सरोकार परम सत्य और परम ब्रह्म से था। उन्होंने ब्रह्म की परिभाषा 'सच्चिदानंद' (=सत्+चित्+आनंद) के रूप में दी, अर्थात् वह परम सत्य (शाश्वत और निर्विकार), चेतन और आनंदमय है। परम ब्रह्म या परमात्मा की सेवा और ध्यान में ही आत्मा का परम कल्याण निहित है। प्रश्न यह है कि परमात्मा की सेवा कैसे की जाए? क्या संसार से विमुख होकर एकांत वन, पर्वत-शिखर या कंदरा में समाधि लगा कर परमेश्वर का ध्यान करने से वह मिल जाएगा? विवेकानंद ने आध्यात्मिक साधना की इस विधि का खंडन किया। उन्होंने तर्क दिया कि इस धरती का मानव-समुदाय ही ईश्वर के अस्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है; उसी के माध्यम से ईश्वर का साक्षात्कार संभव और सार्थक होता है। अतः यदि तुम ईश्वर की सेवा करना चाहते हो तो मनुष्य की सेवा करो—उस मनुष्य की जिसे तुम्हारी सेवा और सहायता की प्रबल आवश्यकता है; **दीन-दुःखी, असहाय और पीड़ित मानवता की सेवा ही ईश्वर की सच्ची सेवा है**। प्रस्तुत संदर्भ में स्वामीजी ने **'दरिद्र नारायण'** की संकल्पना प्रस्तुत की है। जब हम 'दरिद्र' को 'नारायण' मान कर उसकी सेवा और सहायता करेंगे तभी हमारी आत्मा इतनी पावन हो सकेगी कि उसे ईश्वर का साक्षात्कार हो जाएगा। इस तरह विवेकानंद ने मानववाद के आध्यात्मिक आधार को मान्यता प्रदान की।

मनुष्यों के दुःख और पीड़ा का एक प्रधान कारण है, ऐसी सामजिक प्रथाएं जो किसी उत्तम उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्थापित की गई थीं, परंतु अब उनका कोई उपयोग नहीं रहा। कुछ स्वार्थी तत्त्व उन्हें अब तक क़ायम रखकर दूसरों पर अत्याचार कर रहे हैं। हिंदू धर्म के अंतर्गत एक ऐसी ही प्रथा है, वर्ण-व्यवस्था या जाति-प्रथा (Caste System) जिसे अनावश्यक रूप से कठोर बना दिया गया है। विवेकानंद ने जात-पांत के नियमों को उदार बनाने की पैरवी की और अस्पृश्यता (Untouchability) की अमानवीय प्रथा की तीव्र निंदा की। उन्होंने ब्राह्मणों के 'अधिकारवाद' (Authoritarianism) पर प्रहार करते हुए शूद्रों को सर्वोच्च आध्यात्मिक ज्ञान से वंचित रखने की प्रथा का कड़ा विरोध किया। सब मनुष्यों की आध्यात्मिक समानता (Spiritual Equality) का समर्थन करते हुए उन्होंने तर्क दिया कि परम सत्य का ज्ञान सब मनुष्यों को सुलभ होना चाहिए—तभी दीन-दुःखियों की दासता के बंधन टूटेंगे और संपूर्ण राष्ट्र का उत्थान होगा। वस्तुतः दीन-हीन, पतित और पद-दलित लोगों के प्रति विवेकानंद के हृदय में करुणा का सागर लहराता था।

अस्पृश्यता
(Untouchability)

अस्पृश्यता हिंदू समाज के पतनोन्मुख दौर की एक कुप्रथा थी जिसमें समाज के एक बड़े हिस्से को जाति-बाह्य (Outcaste) मान कर सवर्ण हिंदुओं के शरीर या उनके उपयोग की वस्तुओं का स्पर्श करने के अधिकार से वंचित रखा जाता था। इन्हें सामुदायिक कुओं या तालाबों से पानी भरने, सामुदायिक घाट पर नहाने, सामुदायिक शौचालयों के प्रयोग या सार्वजनिक स्थानों पर जाने की अनुमति नहीं थी, यहां तक कि इन्हें मंदिरों में भी प्रवेश का अधिकार नहीं था। इन तथाकथित 'अस्पृश्य' लोगों के प्रति किए गए सामाजिक अन्याय की ओर ध्यान खींचने के लिए महात्मा ज्योतिबा फुले (1827-90) ने इन्हें 'दलित' की संज्ञा दी थी, और अब यह शब्द विस्तृत रूप से प्रचलित है।

विवेकानंद की दृष्टि में, वर्ण-व्यवस्था को तत्काल समाप्त करना संभव नहीं था, परंतु इसमें विस्तृत सुधार अत्यंत आवश्यक था। उन्होंने यह मांग की कि सब वर्णों की समानता (Equality) **स्थापित करने के लिए सबसे पहले उपेक्षित और पद-दलित वर्गों को शिक्षा के विस्तृत अवसर प्रदान करना ज़रूरी है।** उन्होंने तर्क दिया कि यदि ब्राह्मण अपने-आपको बहुत मेधावी समझता है, और शूद्र को जड़बुद्धि मानता है तो शूद्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। यदि ब्राह्मण के लिए एक शिक्षक की व्यवस्था है तो शूद्र के लिए दस शिक्षकों की व्यवस्था होनी चाहिए।

यदि निर्धन शिक्षा तक नहीं पहुँच पाते तो स्वयं शिक्षा को खेत, कारखाने, या जहाँ भी वे काम करने वाले लोगों के पास पहुँच जाना चाहिए।

स्वामी विवेकानंद

उन्होंने यह विचार रखा कि ऐतिहासिक विकास के क्रम में चारों वर्ण बारी-बारी से मानव समाज पर राज करते हैं। ब्राह्मणों के राज में ज्ञान-विज्ञान की उन्नति होती है, परंतु सारा ज्ञान-विज्ञान गिने-चुने लोगों की बपौती बना रहता है। क्षत्रियों के राज में ज्ञान-विज्ञान का विस्तार होता है; शौर्य और पराक्रम को विशेष सम्मान दिया जाता है, परंतु इसमें जनसाधारण का दमन और उत्पीड़न होने लगता है। वैश्यों के राज में धन-संपदा की वृद्धि होती है, परंतु जनसाधारण का आर्थिक शोषण (Exploitation), और संस्कृति का ह्रास होता है। अब शूद्रों और कामगारों (Workers) के राज की बारी है। इसमें सुख और संपदा का विस्तृत वितरण होगा, परंतु सभ्यता का स्तर गिर जाएगा। इसमें साधारण शिक्षा का विस्तार होगा, परंतु असाधारण प्रतिभा दुर्लभ होती जाएगी। आदर्श राज्य वह होगा जिसमें **ब्राह्मण युग के ज्ञान, क्षत्रिय युग के पराक्रम, वैश्य युग की समृद्धि** और शूद्र युग **की समानता** (Equality) **में संतुलन क़ायम रखा जा सके।**

Scanned with CamScanner

...विवेकानंद के अनुसार विभिन्न जातियों के शासन की प्रमुख विशेषताएं
(...Features of the Rule by Different Castes as Identified by Vivekanand)

...करने वाली जाति (...Ruling Caste)	शासन के गुण (*Merits*)	शासन के अवगुण (*Demerits*)
... (पुरोहित वर्ग)	इसमें ज्ञान-विज्ञान की नींव रखी जाती है	इसमें सारा ज्ञान-विज्ञान गिने-चुने लोगों की बपौती बना रहता है
... (सैनिक वर्ग)	इसमें ज्ञान-विज्ञान का विस्तार होता है; शौर्य और पराक्रम को विशेष सम्मान दिया जाता है	इसमें जनसाधारण का दमन और उत्पीड़न होने लगता है
... (व्यापारी वर्ग)	इसमें धन-संपदा की वृद्धि होती है	इसमें जनसाधारण का आर्थिक शोषण (Exploitation), और संस्कृति का ह्रास होता है
... (श्रमिक वर्ग)	इसमें सुख की सामग्री का विस्तृत वितरण, और साधारण शिक्षा का विस्तार होता है	इसमें सभ्यता का स्तर गिर जाता है, और असाधारण प्रतिभा दुर्लभ हो जाती है

...तंत्रता का महत्त्व
(...ificance of Freedom)

...मी विवेकानंद के अनुसार, आध्यात्मिक साधना आध्यात्मिक स्वतंत्रता (Spiritual Freedom) ...प्त करती है। परंतु संसार से नाता तोड़ कर आध्यात्मिक स्वतंत्रता नहीं ढूंढ़ी जा सकती। ...पीड़ित मानवता की सेवा से मुँह मोड़ कर ईश्वर की सेवा नहीं की जा सकती, वैसे ही ...धीन **देश की स्वतंत्रता की चिंता छोड़ कर आध्यात्मिक स्वतंत्रता की तलाश करना** ...र्थ होगा। विवेकानंद ने हमारी जननी, जन्मभूमि भारत माता को आराध्य देवी का सम्मान देते ...ए इसकी सेवा को ईश्वर की आराधना के तुल्य बताया। स्वामी विवेकानंद का 'संन्यासी गीत' ...तंत्रता की महिमा को इतने प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है कि वह बहुत सारे देशप्रेमियों ...और राष्ट्रवादियों की प्रेरणा का स्रोत बन गया। इसके एक अंश का भावार्थ यह है:

अपनी बेड़ियां तोड़ डालो;
जिन ज़ंजीरों से तुम जकड़े हो–
वे चाहे चमचमाते स्वर्ण की हों
या काले स्याह लोहे की,
प्रेम की हों या घृणा की,

Scanned with CamScanner